



आचार्य श्री के साहित्य में साधना का स्वरूप

□ श्री केशरीकिशोर नलवाया

स्व. आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. के सत्साहित्य में और 'प्रार्थना प्रवचन' में आत्म-साधना के विषय में यत्र-तत्र बहुमूल्य विचार-बिन्दु बिखरे पड़े हैं जो पठनीय तो हैं ही आचरणीय भी हैं ।

आचार्य श्री ने 'प्रार्थना प्रवचन' पृष्ठ १०२ पर निम्न विचार व्यक्त किये हैं—“आत्मा का सजातीय द्रव्य परमात्मा है । अतएव जब विचारशील मानव संसार के सुरम्य पदार्थों में और सुन्दर एवं मूल्यवान् वैभव में शांति खोजते-खोजते निराश हो जाता है, तब उनसे विमुख होकर नितरते-नितरते पानी की तरह परमात्म स्वभाव में लीन होता है । वहीं उसे शांति और विश्रान्ति मिलती है ।”

अनन्त काल के जिस क्षण में जड़-चेतन का संयोग हुआ होगा तब से अब तक यह आत्मा जन्म-मरण करते-करते थक गया है, श्रान्त हो गया है इसलिये अब विश्रान्ति चाहता है । इसी बात को आचार्य श्री निम्न शब्दों में प्रकट करते हुए फरमाते हैं कि “जो आत्मा अनन्त काल से अपने स्वरूप को न समझने के कारण जड़भाव में बह रहा है, उसमें जो मुकुलिता आ गई है उसे जब परमात्मा के ध्यान से, चिन्तन से अपने वीतराग स्वरूप का ख्याल आता है तब उसकी सारी मुकुलित दशा समाप्त हो जाती है ।” आत्मा अपूर्ण और परमात्मा पूर्ण है । जहाँ अपूर्णता है वहाँ प्यास है, ख्वाइश है, प्रार्थना है, अपूर्ण को जहाँ पूर्णता दिखती है, वहीं वह जाता है ।”

साधना के मार्ग में जो रुकावटें आती हैं उनके निराकरण के बारे में आचार्य श्री कहते हैं कि—

“दर्पण साफ है लेकिन एक पतला सा भी कपड़ा आड़ा आ जाय तो उसमें वह चमक पैदा नहीं हो सकेगी । कपड़ा भी हटा दिया जाय और दर्पण उलटा रख दिया जाय तब भी उसमें चमक नहीं आयेगी । दर्पण सीधा है, फिर भी यदि वह स्थिर नहीं है और चलायमान है तो क्या बराबर किरणों को

फैला सकेगा ? नहीं। जब तक दर्पण में स्थिरता का अभाव है, मलिनता है और आवरण है, इन तीनों में से कोई भी दोष विद्यमान है, तब तक दर्पण सूर्य किरणों को ठीक तरह ग्रहण नहीं कर सकता।”

(प्रार्थना-प्रवचन, पृ. १०६)

दर्पण को मांजा नहीं। बिना मांजे दर्पण अपना तेज कैसे प्रगट कर सकता है ? इसी बात को स्पष्ट करते हुए आचार्य प्रवर ‘प्रार्थन-प्रवचन’ पृष्ठ १०६ पर पुनः फरमाते हैं—“वीतराग स्वरूप के साथ एकाकार होने के साधन हैं—प्रार्थना, चिन्तन, ध्यान, स्वाध्याय, सत्संग, संयम आदि। इन साधनों का आलम्बन करने से निश्चय ही वह ज्योति प्रकट होगी।” आत्मा को पतन के मार्ग पर धकेलने वाले दो प्रमुख कारण हैं—पहला अहं (मैं हूँ) और दूसरा ममकार (मेरा है)।

इसी बात को आचार्य श्री इन शब्दों में व्यक्त करते हैं—“आत्मा एक भाव है। यह खुद तिरने वाली है और दूसरों को तारने वाली है। लेकिन आत्मा रूपी नाव के नीचे छेद हुआ चाहना या कामना का। तब कर्मों का पानी नाव में आने लगा। नाव लबालब पानी से भर गई और डूब गई।”

(गजेन्द्र व्याख्यानमाला भाग ६ में पृष्ठ २८१)

इच्छा की बेल को काटे बिना और समभाव लाये बिना सुख की प्राप्ति हो नहीं सकती। “गजेन्द्र व्याख्यानमाला” भाग ६ में पृष्ठ २८५ पर आप बताते हैं—मन पुद्गल है, मन और जल का स्वभाव एक है। दोनों का स्वभाव नीचे जाने का है। राग में ममता है, आकर्षण है। द्वेष के साथ अहंकार जुड़ा है। इसीलिये आचार्य श्री कहते हैं।

“ममता-विसर्जन से ही दुःख मिटता है। वस्तु मेरी नहीं, मेरी निश्चा में है” यही मानकर अपना जीवन व्यवहार कर।

पृ० २८८ पर आचार्य श्री आगे बतलाते हैं—

१. भौतिक वस्तु में ममता मत रखो।
२. विचार-शुद्धि साधना के लिये आवश्यक है।
३. शक्ति रहते त्याग करने में आनन्द है।
४. ज्ञान भाव पूर्वक राग का त्याग हो।
५. धन पराया है, रखवाली का काम अपना है।

६. मन और इन्द्रियों पर नियंत्रण करो ।
७. आगार धर्म को स्वीकार कर अगार धर्म की तरफ बढ़ने का प्रयास करो ।
८. बंध का कारण राग और बंध-मोचन का कारण विराग है ।

पृ० १४१ पर आचार्य प्रवर फरमाते हैं—साधना तप प्रधान है । तपस्या में चिन्तन के लिये स्वाध्याय आवश्यक है । तप राग घटाने की क्रिया है । तप के साथ विवेक आवश्यक है । आध्यात्मिक साधना में दृढ़ संकल्पी होना, मत्सर भावना का त्याग करना और सम्यक्दृष्टि रखना साधक के लिये परम आवश्यक है ।

—५२८/७, नेहरू नगर, इन्दौर

नश्वर काया

थारी फूल सी देह पलक में, पलटे क्या मगरूरी साखे रे ।
 आतम ज्ञान अमीरस तजने, जहर जड़ी किम चाखे रे ॥ १ ॥

काल बली थारे लारे पड़ियो, ज्यों पीसे त्यों फाके रे ।
 जरा मंजारी छल कर बैठी, ज्यों मूसा पर ताके रे ॥ २ ॥

सिर पर पाग लगा खुशबोई, तेवड़ा छोगा नाखे रे ।
 निरखे नार पार की नेणे, वचन विषय किम भाखे रे ॥ ३ ॥

इन्द्र धनुष ज्यों पलक में पलटे, देह खेह सम दाखे रे ।
 इण सूं मोह करे सोई मूरख, इम कहे आगम साखे रे ॥ ४ ॥

‘रतनचन्द’ जग इवे वर्था, फांदिए कर्म विपाके रे ।
 शिव सुख ज्ञान दियो मोय सतगुरु, तिण सुख री अभिलाखे रे ॥ ५ ॥

—आचार्य श्री रतनचन्दजी म. सा.